विषय सूची

प्रस्तावना ix

परिचय..... 1
सत्य 17
आनन्द..... 21
अकर्ता 25
भाग्य..... 31
स्वेच्छा 35
अद्वैत 43
अहम्..... 49
विचारधारा और सोच-समझ 53
अहंकारी और जैविक प्रतिक्रिया 57
कार्यशील और विचारशील मन 61
ज्ञानोदय..... 65
व्यक्तिगत जाँच..... 71
स्रोत से जुड़े रहना..... 77
प्रार्थना..... 81

समाप्ति 87
आभार 93

प्रस्तावना

रमेश बलसेकर

जब गौतम ने मुझे बताया कि उसने मेरी शिक्षाओं पर पुस्तिका लिखी है और वह चाहता है कि मैं उस पर एक नज़र डालूँ, तो अचानक मेरे मन में यह बात उठी कि, ''वाह, आखिरकार यह हो ही गया।''

मुझे कुछ समय पहले से ही यह एहसास था कि गौतम शिक्षण के लिए 'अनुकूल' पात्र था। हमारी मुलाकात की शुरुआत से ही मुझे यह स्पष्ट हो गया था कि शिक्षण उसके लिए 'जागृति' से ज्यादा 'मुक्ति' थी।

जब मैंने उससे यह कहा कि वो एक आदमी के बजाय एक मशीन की तरह ज्यादा है तो वो बिलकुल अचंभित नहीं हुआ। यह बात मुझे एक कहानी की याद दिलाती है जो मैंने काफ़ी समय पहले पढ़ी थी। एक बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनी को अच्छे पदों पर कुछ लोगों को भर्ती करने की ज़रूरत आ पड़ी, और वे चाहते थे कि भर्ती में किसी भी तरह का भेदभाव न हो। यह पूरी तरह से निष्पक्ष हो। इसलिए उन्होंने इस काम के लिए एक बहुत ही कीमती रोबोट का उपयोग किया जो कि इसी उद्देश्य के लिए बनाया गया था।

एक उम्मीदवार जल्द ही यह भूल गया कि उसका इंटरव्यू एक रोबोट ले रहा है और किसी बात पर अपना धैर्य खोते हुए बोल उठा, ''तुम मूर्ख हो!'' रोबोट ने शांति से जवाब दिया, ''हो सकता है, मेरे दोस्त, लेकिन तुम शायद भूल गए हो कि इस नौकरी के लिए इंटरव्यू तुम्हारा लिया जा रहा है।''

मुझे लगता है कि पाठक गौतम की किताब को इतना संतोषजनक पाएँगे कि इसे पढ़ने के बाद वो आराम से बैठकर यह सोचेंगे कि आखिर ''इसे पढ़ कौन रहा था?''

– रमेश एस. बलसेकर
24 फरवरी 2008

परिचय

मुझे याद है कि जब मैं पहली बार फरवरी 2000 में रमेश बलसेकर के प्रवचन में शामिल हुआ, तो मुझे वाकई यह समझ नहीं आ रहा था कि किस बात पर इतनी हलचल मच रही थी। मैंने उन्हें वहाँ एकत्रित लोगों से यह कहते सुना कि सबकुछ ईश्वर की मर्जी से होता है। अगले कुछ रविवारों तक मैं वहाँ जाता रहा। मैं सोच रहा था कि आखिर इतनी साधारण सी बात से लोग इतने मंत्रमुग्ध क्यों हैं जो वे दुनिया भर से सुनने के लिए आते हैं? मैं हर रविवार को जाता रहा और मैंने उनकी शिक्षा के कई पहलुओं को ग्रहण भी किया। परंतु वह क्या बात थी जो मेरी समझ में नहीं आ रही थी?

मुझे हमेशा से यह स्पष्ट था कि जिन बड़े हादसों ने तब तक मेरे जीवन को ढाला था, वे स्वत: घटित हुए थे और उनमें मेरी कोई क्रियाशील भूमिका नहीं थी। मैंने 14 वर्ष की उम्र में अपने पिता को खो दिया था। साफ़ था कि यह मेरे किसी कारण से नहीं हुआ था। इसी तरह, दूसरी स्थिति तब आई जब मैंने 24 साल की उम्र में काम की बागडोर संभाली और तीस लोगों के नेतृत्व का जिम्मा लिया, जिनमें सभी मुझसे उम्र में बड़े थे।

यदि ऐसा न होता तो कंपनी बंद हो जाती क्योंकि सिनीयर प्रबंधकों ने एक प्रतियोगी कार्य शुरू करने के लिए मेरी कंपनी को छोड़ दिया था। मैंने निश्चित रूप से इस स्थिति को भी नहीं चुना था, बस यह घट गयी।

मुझे याद है कि किशोरावस्था में मेरे सामने ऐसे कई भयभीत करने वाले मौके आए, जैसे कि परीक्षा परिणाम का इंतज़ार, जहाँ चिंताऐं होती, और मैं खुद अपने मन में दोहराता:

1. चिंता करने की कोई वजह नहीं है। जो भी होना होगा वह हो कर रहेगा, चाहे मैं कितनी भी चिंता कर लूँ।
2. और अगर उसे नहीं होना होगा, तो चिंता करके मैं अपना बहुत ज्यादा समय नष्ट करूँगा।

नि:संदेह यह विचार मन को काफ़ी तार्किक लगे, लेकिन इन्होंने मेरे भीतर चल रही 'बकबक' को कम करने में कोई खास मदद नहीं की। बल्कि, उन्होंने मेरे मन में चल रही बकबक को और बढ़ा दिया और मेरे मन ने अब इन दोनो विचारों को किसी मंत्र की तरह दोहराना शुरू कर दिया। यह साफ़ था कि 'सहमति' इस मन के पार कहीं और ही थी। यह मन एक कुत्ते की तरह था जो बार-बार अपनी ही पूँछ का पीछा किए जा रहा था। कई वर्षों के बाद जब मैं रमेश के मार्गदर्शन में आया तो मेरी समझ में यह बात आई कि 'बौद्धिक चेतना' और 'हृदय के भीतर की चेतना' में क्या अंतर है।

किसी भी उपदेश के मूल्य का अंदाजा हमारे दैनिक जीवन पर

उससे होने वाले प्रभाव से लगाया जाता है। मेरे जीवन में ऐसे कई मौके आए जब इन उपदेशों के मार्गदर्शन ने जीवन के बारे में मेरी समझ को काफ़ी हद तक बदल दिया।

मैं एक छोटा सा उदाहरण दूँगा। मुझे याद है कुछ महीने पहले एक दिन मैं अपने एक विदेशी मित्र और उसकी ग्यारह वर्षीय बेटी को लेकर खरीदारी के लिए एक हस्तशिल्प की दुकान पर गया। मेरे मित्र की बेटी अपने दोस्तों के लिए कुछ उपहार खरीदना चाहती थी, मगर उसकी माँ ने मुझे उसके दुविधापूर्ण स्वभाव के बारे में पहले ही सावधान कर दिया और इसलिए ये बेहतर था कि मैं घर चला जाऊँ और वे बाद में आएँ। मगर मैंने रुकने का फैसला किया क्योंकि उन्हें वापस जाने के लिए एक सवारी की ज़रूरत थी। मैं देखने लगा कि मेरे मित्र की बेटी किस तरह दुकान की शेल्फ से कैश काउंटर तक बार-बार उपहार बदलने आ-जा रही थी। वह निश्चित रूप से खुश नहीं थी। उसके चेहरे की त्योरियाँ साफ़ दिख रही थीं और वह यह तय नहीं कर पा रही थी कि कौन-सा उपहार लेना है। यह साफ़ था कि उसकी दुविधा में उसकी कोई गलती नहीं थी, बल्कि जैसा कि रमेश कहते हैं इसमें उसके 'जनू' (genes) और उसके 'संस्कारों' (conditioning) की भूमिका थी। आखिर कोई भी दुविधाग्रस्त होना क्यों पसंद करेगा? चिड़चिड़ापन या झुंझलाहट की जगह दया के भाव ने ले ली और मैं यह समझने लगा कि किस तरह दृष्टिकोण में बदलाव से हमारी प्रतिक्रिया बदल सकती है। मैं यह समझने लगा कि लड़की की माँ यह सोच कर चिंतित हो रही थी कि बेटी के दुविधाग्रस्त स्वभाव से मैं झुंझला जाऊँगा। और इसलिए मैं माँ को आश्वस्त करने लगा कि सबकुछ

ठीक था। इस छोटी-सी घटना ने मुझे बताया कि कैसे सही समझ से हमारी दिन-प्रतिदिन की परिस्थितियाँ बदल सकती हैं।

कई साल बाद, संयोग से ही, मैं आध्यात्मिक पुस्तकों के प्रकाशन के काम में लग गया। मेरी माँ की लिखी पुस्तक के लिए कोई प्रकाशक नहीं मिल रहा था। शायद पहली बार रंगीन चित्रों के माध्यम से कुंडलिनी अनुभव की व्याख्या की जा रही थी। और इसकी उच्च लागत प्रकाशन के लिए एक जोखिम माना जा रहा था। इसलिए, हमने अपने दम पर इसे प्रकाशित करने का निर्णय लिया। और इस तरह एक प्रकाशन फ़र्म का जन्म हुआ। किसे पता था कि यह कंपनी चार-पाँच साल के बाद भी जीवित रहेगी और रमेश की पुस्तकों सहित अन्य पुस्तकों का प्रकाशन भी करेगी। मुझे याद है कि एक प्रमुख दैनिक समाचार पत्र जो आध्यात्मिक और समग्र जीवन शैली से संबंधित कारोबार पर एक लेख लिख रहा था, ने मेरा इंटरव्यु लिया था। टेलिफ़ोन पर किसी व्यक्ति ने मुझसे पूछा, ''आपकी कारोबार योजना क्या है?'' और जब मैंने कहा, ''केवल भगवान ही जानता है!'' उसने सोचा कि मैं मज़ाक कर रहा था। जब मैंने उससे कहा कि मुझे वास्तव में पता नहीं है क्योंकि मेरी कोई औपचारिक कारोबार योजना नहीं थी, उसने तुरंत फ़ोन रख दिया यह सोचकर कि शायद मैं उसकी बात को हल्के से ले रहा था।

मैं अपने जीवन की इन घटनाओं का उल्लेख इसलिए कर रहा हूँ ताकि आप समझ सकें कि आपके जीवन की सभी बड़ी घटनाओं और परिवर्तनों का परिस्थितियों के साथ गहरा संबंध है। अगर वे घटित नहीं होतीं, तो आप जहाँ हैं वहाँ न होते।

आप अपने मित्रों पर नज़र डालें। क्या उनमें से अधिकांश संयोगवश आपके मित्र नहीं बनें?

जीवन सिर्फ़ घटित होता है। मेरी पहली मुलाकात के बाद कई महीनों तक मैं रमेश से यही सुनता रहा। मेरे लिए यह बात कि हम साँस लेते नहीं हैं बल्कि वह स्वत: घटित होती है, ने कर्ताहीनता के मेरे तर्क को शुरू होने से पहले ही खत्म कर दिया। भाग्यवादी चिंतन के बारे में मेरी सारी चिंताएँ रमण महर्षि के इस शिक्षण के बाद अपने आप समाप्त हो गयीं कि ''हर किसी के जीवन का उद्देश्य पूरा होता है, आप चाहें या न चाहें। उद्देश्य को स्वयं ही पूरा होने दें।''

जल्द ही, हर रविवार को रमेश से मिलना मेरी आदत सी बन गई। मुझे याद है कि रमेश से मेरी दूसरी मुलाकात में ही उन्होंने कहा था कि मुझे सावधान रहने की ज़रूरत है, और कहीं ये मेरे लिए रविवार के चर्च जाने जैसा न बन जाए। और वाकई में कुछ ऐसा ही हुआ, हालाँकि इस चर्च में चेतना ही ईश्वर है। आठ साल हो गए हैं जब मैंने पहली बार उनके सत्संग में भाग लिया था। इन वर्षों में मैंने उनके शिक्षण को हमेशा सरल, नित्य और स्पष्ट पाया है। जैसा कि उन्होंने हाल ही में एक सत्संग में कहा, ''आपके प्रश्न का मेरे पास हमेशा एक उत्तर होगा, यह जरूरी नहीं है कि आप हमेशा इससे सहमत हों। लेकिन मेरे पास हमेशा एक उत्तर तो जरूर होगा – क्यों? क्योंकि मैंने भी वही सवाल किए हैं जो आप कर रहे हैं और मेरे निष्कर्ष मेरे व्यक्तिगत अनुभवों पर आधारित हैं।

मैं सोचा करता था कि ऐसा क्या है जो इन वर्षों में बार-बार मुझे उनकी तरफ़ खींचता रहता था, जबकि वे सिर्फ़ एक ही बात अलग-अलग तरीके से दोहराते रहते थे। जब मैंने यही बात उनसे पूछी तो उन्होंने कहा कि यह अपने पसंदीदा गीत सुनने जैसा है। आप इसे बार-बार सुन कर भी थकते नहीं हैं। और यह बात वाकई मेरे दिल को छू गई।

मई 2007 में रमेश के 90वें जन्मदिन पर मेरा उनको समर्पित एक लेख भारत की एक जानी-मानी आध्यात्मिक पत्रिका में छपा। मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि इसे पाठकों ने काफ़ी सराहा और रमेश ने मुझे सलाह दी कि इस लेख को एक छोटी-सी पुस्तक के रूप में भी प्रस्तुत किया जाए। मगर यह विचार काफ़ी अरसे तक ऐसे ही मेरे दिमाग के किसी कोने में पड़ा रहा। हाल ही में यह विचार मेरे मन में फिर से तरोताज़ा हुआ। मैंने ठान लिया कि पिछले आठ साल में मैंने रमेश से जो कुछ भी सीखा है, जो कि उनके शिक्षण का मूल हो, उसके बारे में लिखा जाए।

तो मैं अपना लैपटॉप लेकर बैठा और आश्चर्यजनक रूप से इस छोटी-सी किताब का जन्म हुआ जो उनकी सभी शिक्षाओं को समाहित करती है। और इसमें मुझे कुछ घंटों से ज्यादा वक्त नहीं लगा। मैंने यह कभी नहीं सोचा कि मुझे उनकी पहले की किताबें या ऑडियो सीडी/डीवीडी की ओर जाना चाहिए, क्योंकि मैं जानता था कि यह एक अंतहीन प्रक्रिया होगी और मुझे मानसिक रूप से कुछ ऐसे जकड़ लेगी कि मानो कोई कल ही न हो। तो मैंने सिर्फ एक ऑडियो सीडी सुनने का फैसला किया ताकि उनकी आवाज की

शैली को याद किया जा सके और फिर मैंने वह लिखा जो भी मेरी स्मृति में आया।

इन वर्षों में, रमेश ने पच्चीस से अधिक पुस्तकें लिखी हैं। इनमें कुछ सीधे उनके द्वारा हस्तलिखित नोट्स के रूप में लिखी गयी हैं, और कुछ उनके शिष्यों के साथ विभिन्न बातचीत के टेप के अंश हैं।

उनके सत्संग के बारे में सबसे अच्छी बात यह थी कि वे सरल भाषा का प्रयोग करते थे और धीरे-धीरे अपने पास आने वालों का मार्गदर्शन करते थे। छोटे और संक्षिप्त वाक्य जो एक-दूसरे से जुड़ते हुए तर्किक तौर से अपने मकसद पर पहुँचते थे। इसी तरीके का प्रयोग मैंने यहाँ भी किया है ताकि उनके सुबह के प्रवचनों का असली आनंद मिल सके। जिस तरह रमेश का प्रवचन कभी-कभी लगभग एक घंटे तक एकालाप में बात करते हुए किसी साधक को मुग्ध रखता था, उसी तरह मैंने भी उनकी एकालाप शैली में बोलने का यहाँ-वहाँ प्रयोग किया है। हालाँकि यहाँ पर ज़्यादा ज़ोर उनके प्रवचन की सत्यता पर है और व्याकरण पर कम।

यही अगले कुछ पृष्ठों में प्रस्तुत किया गया है, जिससे आपको रमेश की शिक्षाओं का मर्म उनके साथ एक सत्संग की तरह मिल सके। आप उनकी सभी शिक्षाओं से सहमत हो सकते हैं, या कुछ से सहमत और बाकियों से असहमत हो सकते हैं और ये आपके जीवन की परिस्थितियों को देखने के तरीके को बदल सकते हैं। या आप सभी अवधारणाओं से असहमत होकर इस किताब को खिड़की से बाहर भी फेंक सकते हैं।

लेकिन, जैसा कि रमेश कहते हैं, जो कुछ भी होता है उसमें भगवान की इच्छा और आपका भाग्य होता है।

और अंत में, मैं स्वर्ग में स्थित ईश्वर के मुस्कान की कल्पना कर सकता हूँ, जब रमेश साधकों को बताते हैं कि सब भगवान की इच्छा से होता है। उनका शिक्षण सभी सामाजिक वर्गों और दुनिया भर से लोगों को आकर्षित करता है। वकील, सैनिक, भिक्षु, व्यापारी, अभिनेता, चिकित्सक, नर्स, कलाकार सब रमेश के द्वार पर शांति पाते हैं। फिर चाहे वो एक माँ हो जिसने अपना बेटा किसी दु:खद दुर्घटना में खो दिया हो और यह स्वीकार नहीं कर पा रही हो और बच्चों के उस संरक्षक को दोषी ठहरा रही हो जिसके साथ उसका बेटा पिकनिक पर गया था, या फिर कोई सैनिक जिसने युद्ध के मैदान में अपने दुश्मन को मार डाला और इस अपराध-बोध की वजह से जी नहीं पा रहा है, या फिर एक विश्व प्रसिद्ध संगीतकार जिसके प्रबंधक के धोखे की वजह से उसकी दुर्दशा हो गयी।

रमेश के अंदर अब भी असीम जोश है और वे अब भी लगभग दो घंटे प्रतिदिन दर्शनार्थियों से बातचीत करते हैं। एक रविवार सुबह 9 बजे एक नास्तिक उनके दरवाजे पर दस्तक देता है। और जब वो रमेश के निकट बैठता है तो रमेश उससे कहते हैं, ''एक नास्तिक तब तक नास्तिक नहीं हो सकता है जब तक भगवान की इच्छा न हो।'' साधक उनके पास आते हैं, कुछ सवाल पूछने, और कुछ जो सिर्फ़ उन्हें सुनने। कभी-कभी कार के हॉर्न की आवाज नीचे से ऊपर कमरे तक आ जाती है। रमेश यह स्पष्ट करते हैं कि ईश्वर यहाँ ड्राईवर की सीट पर बैठा है।

अब जब उनकी उम्र 91 के करीब हो चली है तो यह तकदीर को माननेवाला मनुष्य कहता है कि वो घर जाने के लिए तैयार है और इस बात की परवाह नहीं करता कि अगले पल क्या होने वाला है। हाल ही में उन्होंने टिप्पणी की, ''मुझे अतीत का कोई पछतावा नहीं है और न ही मैं भविष्य से कोई उम्मीद रखता हूँ। किसी भी परिस्थिति में मेरे पास अब ज्यादा भविष्य नहीं बचा है,'' और पूरा कमरा ठहाकों से गूँज उठा। चेतना ने उनके शरीर और मन का अच्छा ख्याल रखा है और उनके माध्यम से वो अपना उपदेश साधकों तक पहुँचाते हैं। मुझे ऐसा एहसास होता है जैसे कि ईश्वर रमेश को कह रहे हैं, 'बहुत खूब, अच्छा काम किया मेरे बेटे।' मगर फिर मैं कल्पना करता हूँ रमेश की जो ईश्वर को अपनी शरारती मुस्कान के साथ जवाब देते हैं, ''आप क्या मज़ाक कर रहे हैं?'' क्योंकि वह जानते हैं कि *उन्होंने कुछ नहीं* किया। जो होना था वह खुद-ब-खुद घटित हो गया।